PAPER - I
PHILOSOPHY (HONOURS) PART - I
E. STUDY MATERIAL
FOR B.A. PART I

BY - DR. RAKESH KUMAR SINGH
G.D COLLEGE, BAGHAN
Mob. 9576936617

भारतीय दर्शन की विशेषताएँ :-

भारतीय दार्शनिकों को दो सम्प्रदायों में विभक्त किया गया है - ① आस्तिक और ② नास्तिक। वेद को प्रमाणिक मानने वाले दर्शन को 'आस्तिक' और वेद को अप्रमाणिक मानने वाले दर्शन को नास्तिक दर्शन कहा जाता है। सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त को आस्तिक दर्शन की श्रेणी में रखा जाता है जबकि चार्वाक, बुद्ध और जैन को नास्तिक दर्शन की श्रेणी में रखा गया है। इन दार्शनिकों के विचारों में अत्यधिक आपसी भिन्नता भी है किन्तु इन विभिन्नताओं के बावजूद इनमें कुछ बातों पर साम्य भी दिखलाई पड़ता है। जिन्हें भारतीय दर्शन की सामान्य विशेषताएँ कहा जाता है जो निम्न हैं।

1. भारतीय दर्शन की सबसे पहली विशेषता यह है कि यहाँ मनुष्य के व्यावहारिक पक्ष पर ज्यादा जोर दिया गया है जबकि पाश्चात्य विचारकों के लिए दर्शन एक मानसिक व्यायाम और सैद्धान्तिक है। भारतीय दर्शन में दर्शन का लक्ष्य केवल बुद्धि को सन्तुष्ट करना ही नहीं बल्कि ज्ञान के प्रकाश में जीवन को सुव्यवस्थित बनाना इसका मुख्य उद्देश्य है। जीवन से संबन्धित व्यावहारिक समस्याओं का समाधान करना और ढूँढना भारतीय दार्शनिक अपना प्रमुख कर्तव्य समझते हैं। इसी सम्बन्ध में प्रो० हिरियाना ने ठीक ही कहा है कि "दर्शन सिर्फ सोचने की पद्धति न होकर जीवन पद्धति है।"

2. भारतीय दर्शन की उत्पत्ति आध्यात्मिक असंतोष से हुआ है। रोग, मृत्यु, बुढ़ापा, ऋण आदि दुःखों के फलस्वरूप मानव-मन में हमेशा अशान्ति बनी रहती है। बुद्ध ने विश्व को दुःखात्मक कहा है जिसका समर्थन जैन, सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, शंकर एवं रामानुज आदि विचारक भी करते प्रतीत होते हैं। विश्व

में तीन प्रकार के दुःख हैं। आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधि-दैविक। शारीरिक एवं मानसिक दुःखों को आध्यात्मिक दुःख, कहा जाता है। बाह्य जगत के प्राणियों जैसे - पशु-पक्षियों और मनुष्यों से प्राप्त दुःख को आधि-भौतिक दुःख और दैवी आपदा जैसे - बाढ़, आकाल, भूकम्प आदि से प्राप्त दुःख आधि दैविक दुःख कहे जाते हैं। उपनिषद एवं गीता जैसे दार्शनिक ग्रन्थों में भी विश्व की अपूर्णता की ओर संकेत किया गया है। कुछ आलोचक भारतीय दर्शन में दुःखों का विशद वर्णन पाकर इसे निराशावादी कह देते हैं। ऐसा आक्षेप लगाना सर्वथा अनुचित है क्योंकि वे विश्व के दुःखों को देखकर सिर्फ मौन नहीं रह जाते हैं बल्कि वे दुःखों का कारण जानने का प्रयास करते हैं। साथ ही दुःखों से मुक्ति का उपाय भी बतलाते हैं। भारतीय दर्शन में दुःख निरोध को मोक्ष कहा गया है। प्रत्येक दर्शन में मोक्ष की प्राप्ति के लिए मोक्ष-मार्ग का निर्देश किया गया है। यही कारण है कि चार्वाक को छोड़कर प्रत्येक भारतीय दार्शनिक मोक्ष को जीवन का चरम लक्ष्य मानते हैं। इससे स्पष्ट है कि भारतीय दर्शन को निराशावादी नहीं कहा जा सकता है।

3. भारतीय दर्शन की तीसरी मुख्य विशेषता यह है कि चार्वाक को छोड़कर यहाँ का प्रत्येक दार्शनिक आत्मा की सत्ता में अटूट विश्वास करता है। यहाँ आत्मा को शरीर से भिन्न एक आध्यात्मिक सत्ता कहा कहा गया है। यह नित्य एवं अविनाशी है। शंकर ने तो आत्मज्ञान को ही ब्रह्मज्ञान माना है। भारतीय विचारक तत्वज्ञान के लिए आत्मज्ञान को आवश्यक मानते हैं। भारतीय दर्शन में आत्मा के स्वरूप को लेकर कई विचारधाराओं ने जन्म लिया। चार्वाक के अनुसार चेतन शरीर ही आत्मा है। जैनियों के अनुसार आत्मा या जीव चैतन्य युक्त है जिसमें चार प्रकार की पूर्णतायें - अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन अनन्त वीर्य और अनन्त आनन्द पाई जाती है। न्याय-वैशेषिक और मीमांसा के अनुसार चेतना आत्मा का स्वाभाविक गुण न होकर आकस्मिक गुण है। इसके विपरीत सांख्य दर्शन और शंकर ने

आत्मा को चैतन्य स्वरूप माना है। अर्थात - चैतन्य आत्मा का आवश्यक गुण है। शंकर के अनुसार आत्मा या ब्रह्म एक है और इसे सच्चिदानन्द कहा है। जबकि अन्य दार्शनिकों ने आत्मा की संख्या को अनेक माना है।

4. भारतीय दर्शन की एक मुख्य विशेषता कर्म सिद्धान्त में विश्वास है। कर्म सिद्धान्त के अनुसार इस विश्व में हम जैसा भी कर्म करते हैं उसका फल हमें निश्चित रूप से मिलता है। अर्थात शुभ कर्मों का फल शुभ और अशुभ कर्मों का फल अशुभ होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार हमारा वर्तमान जीवन हमारे अतीत जीवन का फल है और भावी जीवन की आधारशीला हमारे वर्तमान जीवन के कर्मों पर आश्रित होता है। इससे स्पष्ट है कि विश्व में एक नैतिक व्यवस्था है जिसका समर्थन प्रायः सभी भारतीय दार्शनिक करते हैं। जिस प्रकार भौतिक जगत की व्यवस्था को व्याख्या कार्य-कारण नियम के आधार पर की जाती है उसी प्रकार नैतिक जगत की व्यवस्था की व्याख्या कर्म सिद्धान्त के द्वारा ही संभव है। कर्म सिद्धान्त की चर्चा बीज रूप में सर्वप्रथम वेद दर्शन में सन्निहित मिलता है। वैदिक काल के ऋषियों को नैतिक व्यवस्था के प्रति इतनी श्रद्धा थी कि वे इसे ऋत कहते थे जिसका अर्थ होता है जगत की व्यवस्था। इसके अन्दर नैतिक व्यवस्था भी समाविष्ट थी। इस ऋत का विचार उपनिषद् दर्शन में कर्मवाद का रूप ले लेता है। न्याय-वैशेषिक दर्शन में कर्मवाद को अदृष्ट कहा जाता है क्योंकि यह दृष्टिगोचर नहीं होता, जिसका संचालन ईश्वर के द्वारा होता है। ईश्वर ही व्यक्ति को उसके कर्मानुसार सुख या दुःख प्रदान करते हैं। मीमांसा दर्शन में इसे अपूर्व कहा गया है। शाब्दिक रूप में भारतीय दर्शन में कर्म के तीन प्रकार बताये गये हैं (1) संचित कर्म (2) प्रारब्ध कर्म (3) संचयमाण कर्म।

1. संचित कर्म :- यह अतीत के कर्मों से उत्पन्न होता है जिसका फल मिलना अभी शुरू नहीं हुआ है।

2. प्रारब्ध कर्म :- यह भी अतीत के कर्मों से ही उत्पन्न होता है जिसका फल मिलना अभी शुरू हो गया है।

3. संचयीमान कर्म :- यह वर्तमान जीवन के कर्मों से उत्पन्न होता है जिसका फल भविष्य में मिलेगा।

इस प्रकार कर्म सिद्धान्त के आधार पर हम कह सकते हैं कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है।

5. चार्वाक को छोड़कर प्राय: सभी भारतीय विचारक विश्व को एक रंगमंच मानते हैं। जिस प्रकार किसी रंगमंच पर पात्र विभिन्न वस्त्रों में सज-धजकर अपनी भूमिका अदा करते हैं और उसके बाद रंग-मंच से अलग हो जाते हैं, ठीक उसी प्रकार शरीर मन और इन्द्रिय से युक्त होकर इस विश्व रूपी रंगमंच पर उपस्थित होता है और अपने कर्मों का प्रदर्शन कर विदा हो जाता है। प्राणियों को अच्छे कर्मों द्वारा विश्व रंगमंच का सफल अभिनेता बनने का प्रयास करना चाहिए। जिस प्रकार साधारण रंगमंच पर पुराने पात्र विदा होते हैं और नये पात्र उनके स्थान पर आते हैं। इसी प्रकार विश्व भी एक ऐसा मंच है जहाँ पुराने और नये चेहरे सदैव आते जाते रहते हैं।

6. भारतीय दर्शन की एक विशेषता पुनर्जन्म में विश्वास है। पुनर्जन्म का अर्थ है बार-बार जन्म ग्रहण करना। चार्वाक को छोड़कर सभी भारतीय दार्शनिकों ने माना है कि संसार जन्म और मृत्यु की शृंखला है। आत्मा जब अपने कर्मों का फल एक जीवन में प्राप्त नहीं कर सकती है तो वैसी स्थिति में आत्मा को अपने कर्मों का फल भोगने के लिए पुन: जन्म ग्रहण करना पड़ता है। पुर्नजन्म का विचार कर्मवाद तथा आत्मा की अमरता से ही प्रस्फुटित होता है। मृत्यु का अर्थ शरीर का अन्त है, आत्मा का नहीं। अत: नित्य एवं अविनाशी होने के कारण शरीर के विनाश के बाद आत्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करना या धारण करना ही पुर्नजन्म है।

7. भारतीय दर्शन में अज्ञान को बन्धन एवं दुःख का कारण बतलाया गया है। अज्ञान से ग्रसित होकर ही मनुष्य जन्म मरण एवं पुर्नजन्म के चक्कर में पड़ा रहता है तथा सांसारिक दुःखों को झेलता रहता है। सांख्य और योग में अज्ञान का अर्थ अविवेक है। शंकर के अनुसार अज्ञान का का अर्थ है आत्मा के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान न रहना। अज्ञान का नाश ज्ञान से ही संभव होता है। इसलिए सभी दर्शनों में मोक्ष की प्राप्ति के लिए ज्ञान को परमावश्यक बतलाया गया है। अज्ञान को दूर करने के लिए भारतीय दर्शन में सिर्फ तत्वज्ञान को ही पर्याप्त नहीं माना गया है बल्कि सिद्धान्तों के ज्ञान के अतिरिक्त इनका अनवरत चिन्तन भी आवश्यक है। इसलिए भारतीय दर्शन में अनवरत चिन्तन के लिए किसी न किसी प्रकार के अभ्यास या योग की चर्चा की गयी है। अतः जिस प्रकार मेघ के हट जाने से सूर्य का प्रकाश आलोकित होता है, उसी प्रकार अज्ञान के नष्ट हो जाने के बाद बन्धन स्वतः समाप्त हो जाता है और आत्मा को मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

8. चार्वाक के सिवा सम्पूर्ण भारतीय दर्शन मोक्ष को ही जीवन का चरम लक्ष्य माना है। दुःख रहित अवस्था को ही मोक्ष कहा गया है। मोक्ष के सम्बन्ध में दो पक्ष हैं - निषेधात्मक पक्ष और भावात्मक पक्ष। निषेधात्मक रूप से मोक्ष दुःख रहित अवस्था है और भावात्मक रूप से यह आनन्दमय अवस्था है। मोक्ष दो प्रकार के होते हैं (1) जीवन मुक्ति - शरीर धारण किये हुए इसी जीवन में दुःखों से मुक्त हो जाना जीवनमुक्ति है और (2) मृत्यु के बाद शरीर छोड़कर मुक्ति पाना विदेह मुक्ति है। मोक्ष को निर्वाण कैवल्य, ब्रह्मत्व आदि विभिन्न नामों से पुकारा गया है।

9. प्रमाण विज्ञान या ज्ञानमीमांसा पर चर्चा भारतीय दर्शन का मुख्य विषय रहा है। प्रमाण विज्ञान ही एक ऐसा विचार है जिसे सभी नास्तिक और आस्तिक दार्शनिकों ने स्वीकार किया है। सही या वास्तविक ज्ञान को 'प्रमा' कहते हैं। और जिसके माध्यम से

यथार्थ ज्ञान उत्पन्न होता है उसे 'प्रमाण' कहते हैं। प्रत्येक दर्शन में प्रमाण की संख्या एवं उसके स्वरूप पर विवेचन किया गया है। प्रमाणों की संख्या छः है - प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान अर्थापत्ति और अनुपलब्धि। चार्वाक इनमें से केवल प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानता है। अर्थात वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति केवल प्रत्यक्ष से ही संभव है। बौद्ध और जैन दर्शन में प्रत्यक्ष और अनुमान दोनों प्रमाणों को माना गया है। सांख्य दर्शन में प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द को प्रमाण माना गया है। न्याय-वैशेषिक ने प्रत्यक्ष, अनुमान शब्द और उपमान को तथा मीमांसा और वेदान्त ने प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान, अर्थापत्ति एवं अनुपलब्धि को प्रमाण माना है। इन प्रमाणों का भारतीय दर्शन में अत्यधिक महत्व है क्योंकि प्रत्येक दर्शन का तत्व-विज्ञान इन प्रमाण-विज्ञान पर ही अवलम्बित है।

=